10213 - धर्मों की एकता के लिए निमन्त्रण का हुक्म

प्रश्न

"धर्मों की एकता" के लिए निमन्त्रण देने का क्या हुक्म है ?

विस्तृत उत्तर

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह तआला के लिए योग्य है।.

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणान अकेले अल्लाह के लिए है, तथा दया और शान्ति अवतरित हो उस अस्तित्व पर जिस के बाद कोई ईश्दूत (पैगंबर) नहीं, तथा आप के परिवार, आप के साथियों और क़ियामत के दिन तक सच्चाई के साथ उन की पैरवी करने वालों पर, हम्द व सलात के बाद :

इफ्ता और वैज्ञानिक अनुसंधान की स्थायी समिति ने अपने पास आने वाले प्रश्नों, और "धर्मों : इस्लाम धर्म, यहूदी धर्म और ईसाई धर्म की एकता" के निमन्त्रण, और इस से निष्कर्षित होने वाले सार्वजनिक जगहों और विश्वविद्यालयों के कैम्पस में एक ही परिसर में मिस्जद, चर्च और आराधनालय निर्माण करने के निमन्त्रण, तथा एक ही कवर में क़ुरआन करीम, तौरात और इंजील मुद्रण करने का निमन्त्रण, और इस के अलावा इस निमन्त्रण के अन्य प्रभावों, और उस के लिए पूर्व और पिश्चम में होने वाले सम्मेलनों, संगोष्ठियों और संगठनों से संबंधित मीडिया में प्रकाशित होने वाले विचारों और लेखों पर समीक्षा किया, और सोच विचार और अध्ययन करने के बाद समिति निम्नलिखित बातों को सुनिश्चित करती है :

सर्व प्रथम : इस्लामीं आस्था के मूल सिद्धान्तों में से, जिस का धर्म से होना आवश्यक रूप से सर्वज्ञात है और जिस पर मुसलमानों की सर्वसहमति है, यह है कि : धरती पर इस्लाम के सिवाय कोई दूसरा सच्चा धर्म नहीं पाया जाता है, और यह कि वह अन्तिम धर्म है और अपने से पूर्व सभी धर्मों, संप्रदायों और धर्म शास्त्रों को निरस्त करने वाला है, अत : पृथ्वी पर इस्लाम के सिवाय कोई धर्म बाक़ी नहीं है जिस के द्वारा अल्लाह की इबादत की जाये, अल्लाह तअला का फरमान है :

"आज मैं ने तुम्हारे लिए तुम्हारे धर्म को मुकम्मल (सम्पूर्ण) कर दिया और तुम पर अपनी नेमतें पूरी कर दीं और तुम्हारे लिए इस्लाम धर्म को पसन्द कर लिया।" (सूरतुल माईदा : 3).

तथा अल्लाह तआला ने फरमाया :

"जो व्यक्ति इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्म ढूंढे उस का धर्म कदापि स्वीकार नहीं किया जायेगा और वह आख़िरत (प्रलय)

में घाटा (हानि) उठाने वालों में से होगा।" (सूरत आल इम्रान : 85).

और इस्लाम धर्म, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सन्देष्टा बनाये जाने के बाद अन्य धर्मों को छोड़ कर केवल वह है जिसे आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लेकर आये हैं।

दूसरी : इस्लामी आस्था के मूल सिद्धान्तों में से यह है कि : अल्लाह की किताब "क़ुरआन करीम" सब से अन्त में उतरने वाली और सर्व संसार के पालनहार की तरफ से सब से नवीनतम पुस्तक है, और यह कि क़ुर्आन इस से पूर्व उतरने वाली हर किताब जैसे कि तौरात, ज़बूर और इंजील वगैरा को मनसूख करने वाला, और उस पर निरीक्षक है। अत : क़ुरआन करीम के सिवाय कोई ऐसी किताब बाक़ी नहीं रह गई है जिस के द्वारा अल्लाह की इबादत की जाये, अल्लाह तआला का फरमान है : "और हम ने आप की ओर हक़ (सत्य) के साथ यह पुस्तक उतारी है जो अपने से पूर्व पुस्तकों की पुष्टि (प्रमाणित) करने वाली है और उन पर निरीक्षक और संरक्षक (मुहाफिज़) है, अत : आप उन के बीच अल्लाह की उतारी हुई किताब के अनुसार फैसला कीजिए, और आप के पास जो सच्चाई आ चुकी उस से हट कर उन की इच्छाओं पर न चलिए।" (सूरतुल माईदा : 48).

तीसरी : इस बात पर ईमान लाना अनिवार्य है कि तौरात और इंजील, क़ुरआन करीम के द्वारा मनसूख कर दिये गये हैं, और यह कि उन दोनों में कमी और वृद्धि के द्वारा परिवर्तन और हेर-फेर किया गया है, जैसा कि क़ुरआन करीम की कई आयतों में इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है, उसी में से अल्लाह तआला का यह फरमान है : "फिर उन के वादा तोड़ने के सबब हम ने उन पर लानत (शाप) किया और उन के दिल सख्त कर दिये कि कलिमा को उन के उस जगह से तबदील कर देते हैं, और जो कुछ नसीहत उन को दी गई उस का बहुत बड़ा हिस्सा भुला बैठे, उन के एक न एक खयानत की खबर तुझे मिलती रहेगी, लेकिन थोड़े से (लोग) ऐसे नहीं भी हैं।" (सूरतुल माइदा : 13).

तथा अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल का फरमान है : "उन लोगों के लिए हलाकत है, जो खुद अपने हाथों लिखी किताब को अल्लाह की किताब कहते हैं, और इस तरह दुनिया (धन) कमाते हैं, अपने हाथों लिखने की वजह से उन की बरबादी है, और अपनी इस कमाई की वजह से उन का विनाश है।" (सूरतुल बक़रा : 79)

और अल्लाह सुब्हानहु व तआला का फरमान है : "अवश्य उन में ऐसा गिरोह भी है जो किताब पढ़ते हुए अपनी ज़बान मरोड़ लेते हैं, ताकि तुम उसे किताब ही का लेख समझो, हालांकि हक़ीक़त में वह किताब में से नहीं और यह कहते भी हैं कि वह अल्लाह तआला की तरफ से हैं, हालांकि हक़ीक़त में वह अल्लाह तआला की तरफ स नहीं, वह तो जान बूझ कर अल्लाह तआला पर झूठ बोलते हैं।" (सूरत आल इम्रान : 78).

अत : उस में से जो सहीह है वह इस्लाम के द्वारा मनसूख है, और जो उस के अलावा है वह विकृत या परिवर्तित है और उस में हेरा-फेरी की गई है,तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से प्रमाणित है कि जब आप ने उमर बिन ख़त्ताब

रज़ियल्लाहु अन्हु के पास एक पत्रिका देखा जिस में तौरात की कोई चीज़ लिखी थी तो आप क्रोधित हो गये और फरमाया : "ऐ ख़त्ताब के बेटे ! क्या तू शक में पड़ा है ? क्या मैं रोशन और निर्मल धर्मग्रन्थ लेकर नहीं आया हूँ ? यदि मेरे भाई मूसा (अलैहिस्सलाम) भी ज़िन्दा होते तो मेरी पैरवी किये बिना उन के लिए भी कोई उपचार न होता।" इसे अहमद वग़ैरा ने रिवायत किया है।

चौथी : इस्लामी आस्था के मूल सिद्धान्तों में से यह भी है कि : हमारे ईश्दूत और पैगंबर मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम समस्त ईश्दूतों और पैगंबरों की मुद्रिका (अर्थात अन्तिम ईश्दूत और पैगंबर) हैं, जैसाकि अल्लाह तआला का फरमान है : "मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तुम्हारे मर्दों में से किसी के बाप नहीं हैं, किन्तु आप अल्लाह के सन्देष्टा और ख़ातमुल अंबिया -अन्तिम ईश्दूत- हैं।" (सूरतुल अहज़ाब : 40)

अत : मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सिवाय कोई रसूल बाक़ी नहीं है जिस की पैरवी करना अनिवार्य है, और अगर कोई ईश्दूत ज़िन्दा होता तो उस के लिए आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी किए बिना कोई उपचार न होता, और इसी तरह उन के अनुयायियों के लिए भी इस के अलावा कोई उपचार नहीं है, जैसा कि अल्लाह तआला का फरमान है : "जब अल्लाह तआला ने पैग़म्बरों से अहद व पैमान (वचन) लिया कि जो कुछ मैं तुम्हें किताब एंव हिकमत दूँ, फिर तुम्हारे पास वह पैग़म्बर आए जो तुम्हारे पास की चीज़ को सच्च बताए तो तुम्हारे लिए उस पर ईमान लाना और उस की सहायता करना अनिवार्य है। फरमाया कि तुम इस के इक़रारी हो और इस पर मेरा ज़िम्मा (वचन) ले रहे हो ? सब ने कहा कि हमें स्वीकार है, फरमाया : तो अब गवाह रहो और स्वयं मैं भी तुम्हारे साथ गवाहों में से हूँ।" (सुरत आल इम्रान : 81)

तथा ईसा अलैहिस्सलाम जब अन्तिम समय काल में उतरेंगे तो मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अधीन और आप की शरीअत के अनुसार फैसला करने वाले होंगे, और अल्लाह तआला का फरमान है : "जो लोग ऐसे उम्मी (जो पढ़ना-लिखना नहीं जानते थे) नबी (पैग़म्बर) की पैरवी करते हैं जिन को वे लोग अपने पास तौरात व इंजील में लिखा हुआ पाते हैं। वह उन को अच्छी (नेक) बातों का आदेश देते हैं और बुरी बातों से मनाही करते हैं और पवित्र चीज़ों को हलाल (वैद्ध) बताते हैं और अपवित्र चीज़ों को उन पर हराम (वर्जित) बताते हैं, और उन लोगों पर जो बोझ और तौक़ थे उनको दूर करते हैं। सो जो लोग उस पैग़म्बर पर ईमान लाते हैं और उन का सहयोग करते हैं और उनकी सहायता करते हैं और उस नूर (प्रकाश अर्थात क़ुरआन करीम) की पैरवी करते हैं जो उनके साथ भेजा गया है, ऐसे लोग सफलता पाने वाले हैं।" (सूरतुल आराफ : 157)

तथा इस्लामी आस्था के मूल सिद्धान्तों में से यह भी है कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैगंबरी (ईश्दूतत्व) सर्व मानव जाति के लिए सामान्य है, अल्लाह तआला का फरमान है : "हम ने आप को समस्त मानव जाति के लिए शुभ सूचना देने वाला तथा डराने वाला बनाकर भेजा है, किन्तु अक्सर लोग नहीं जानते।" (सूरत सबा : 28)

तथा अल्लाह सुब्हानहु व तआला ने फरमाया : "(ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम !) आप कह दीजिए कि ऐ लोगो ! मैं तुम सब की ओर उस अल्लाह का भेजा हुआ सन्देशवाहक हूँ जिस का राज्य समस्त आकाशों और धरती पर है, उसके अतिरिक्त कोई वास्तविक उपास्य नहीं, वही जीवन प्रदान करता है और वही मृत्यु देता है, सो अल्लाह तआला पर ईमान लाओ तथा उसके नबी-ए-उम्मी (अनपढ़ ईश्दूत) पर जो स्वयं अल्लाह तआला पर और उस के आदेशों पर विश्वास रखते हैं, और उनका आज्ञापालन करो ताकि तुम सीधे मार्ग पर आ जाओ ।" (सूरतुल आराफ : 158). इन के अलावा अन्य आयतें भी हैं ।

पाँचवीं : इस्लाम के मूल सिद्धान्तों में से है कि यहूदियों, ईसाईयों और इन के अलावा अन्य लोगों में से जो भी व्यक्ति इस्लाम में प्रवेश नहीं किया है उस के कुफ्र का एतिक़ाद रखना और जिस पर हुज्जत क़ायम हो गई है उसे काफिर का नाम देना अनिवार्य है, और यह कि वह अल्लाह और उस के पैगंबर और मोमिनों का दुश्मन है, और वह नरकवासियों में से है, जैसा कि अल्लाह तआला का फरमान है : "अहले किताब (यहूदियों और ईसाईयों) के काफिर और मूर्तिपूजक लोग, जब तक कि उन के पास स्पष्ट निशानी न आ जाये रूकने वाले न थे ।" (सूरतुल बैयिना : 1)

तथा अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल ने फरमाया : "बेशक जो लोग किताब वालों (यहूदियों और ईसाईयों) में से काफिर हुये और मुशरिकीन सब नरक की आग में जायेंगे जहाँ वे हमेशा हमेशा रहेंगे, ये लोग बदतरीन मख्लूक़ हैं ।" (सूरतुल बैयिना : 6)

तथा अल्लाह तआला का फरमान है : "और यह क़ुरआन मेरी तरफ वह्य किया गया है ताकि उस के द्वारा मैं तुम्हें और जिस तक पहुँचे उन सब को सावधान करूँ ।" (सूरतुल अंआम : 19)

तथा अल्लाह तआला का फरमान है : "यह क़ुरआन सभी लोगों के लिए सूचना पत्र है कि इस के द्वारा वे सूचित (सावधान) कर दिये जायें ।" (सूरत इब्राहीम : 52) इस के अलावा अन्य आयतें भी हैं ।

तथा सहीह मुस्लिम में साबित है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया : "उस ज़ात की क़सम जिस के हाथ में मेरी जान है, इस उम्मत का जो भी आदमी चाहे यहूदी हो या ईसाई मेरे बारे में सुने, फिर भी उस शरीअत पर ईमान न लाए जो मैं देकर भेजा गया हूँ तो वह अवश्य नरकवासियों में से है ।"

इसीलिए जो आदमी यहूदियों और ईसाईयों को काफिर न समझे वह शरीअत के इस अधिनियम कि : "जो किसी काफिर को उस पर हुज्जत क़ायम हो जाने के बाद काफिर न कहे तो वह काफिर है ।" के अन्तर्गत काफिर है ।

छठा : इन इस्लामी आस्था के मूल सिद्धान्तों और धार्मिक वास्तविकताओं के सामने, धर्मों की एकता, उन के बीच निकटता और उन्हें एक सांचे में ढालने का निमन्त्रण, एक छली और धूर्त्तनिमन्त्रण है, और उस का उद्देश्य हक़ और बातिल का संमिश्रण करना, इस्लाम का विनाश और उस के स्तंभों को ध्वस्त करना, और उस के अनुयायियों (मुसलमानों) को व्यापक

इर्तिदाद (धर्म से फिर जाना, धर्म परिवर्तन) से दो चार करना है, इस बात की सच्चाई अल्लाह सुब्हानहु व तआला के इस फरमान में है : "ये लोग तुम से लड़ाई-झगड़ा करते ही रहेंगे यहाँ तक कि अगर उन से हो सके तो तुम्हें तुम्हारे धर्म से फेर दें।" (सूरतुल बक़रा : 217).

तथा सर्वशक्तिमान अल्लाह का यह फरमान : "वे तमन्ना करते हैं कि जैसे काफिर वे हैं तुम भी उन की तरह ईमान का इंकार करने लगो और तुम सभी बराबर बन जाओ।" (सूरतुन्निसा : 89)

सातवीं : इस पापी निमन्त्रण के कुप्रभावों और दुष्परिणामों में से इस्लाम और कुफ्र, हक़ और बातिल, अच्छाई और बुराई के बीच अन्तर को समाप्त कर देना और मुसलमानों और काफिरों के बीच घृणा के बंध को तोड़ देना है, फिर न तो (इस्लाम के लिए) दोस्ती और दुश्मनी बाक़ी रह जायेगी, और न धरती पर अल्लाह के कलिमा को सर्वोच्च करने के लिए युद्ध और जिहाद ही बाक़ी रह जायेगा, जबकि सर्वशक्तिमान और पवित्र अल्लाह का फरमान है कि : "जो लोग अहले किताब (अर्थात यहूदियों और ईसाईयों) में से अल्लाह पर ईमान नहीं लाते और न आखिरत के दिन पर (विश्वास रखते हैं) और न उन चीज़ों को हराम समझते हैं जो अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने हराम घोषित किये हैं, और न दीने-हक़ (सत्य-धर्म) को स्वीकारते हैं, उन से जंग करो यहाँ तक कि वे अपमानित हो कर अपने हाथ से जिज़्या (टैक्स) दें।" (सूरतुत्तौबा : 29)

तथा अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल का फरमान है कि : "और तुम सभी काफिरों से लड़ाई करो जैसे कि वे तुम सब से लड़ते हैं, और जान रखो कि अल्लाह तआला परहेज़गारों के साथ है।" (सूरतुत्तौबा : 36)

तथा अल्लाह तआला का फरमान है : "ऐ ईमान वालो ! तुम अपना हार्दिक मित्र ईमान वालों के सिवाय किसी दूसरे को न बनाओ, (तुम नहीं देखते दूसरे लोग तो) तुम्हारी तबाही में कोई कसर उठा नहीं रखते, वे तो चाहते यह हैं कि तुम दुख में पड़ो, उन की दुश्मनी तो खुद उन के मुंह से भी स्पष्ट हो चुकी है और वह जो उन के सीनों में छिपा है वह बहुत अधिक है, हम ने तुम्हारे लिए आयतों को बयान कर दिया यदि तुम बुद्धि रखते हो (तो फिक्र करो)।" (सूरत आल इम्रान : 118)

आठवीं : धर्मों की एकता के लिए निमन्त्रण अगर कोई मुसलमान देता है तो इसे स्पष्ट रूप से इस्लाम धर्म से फिर जाना (मुर्तद हो जाना) समझा जायेगा ; क्योंकि यह इस्लामी आस्था के मूल सिद्धान्तों से टकराता है, या निमन्त्रण सर्वशक्तिमान अल्लाह के साथ कुफ्र को स्वीकारता है, और क़ुरआन की सच्चाई और उस के अपने से पूर्व सभी शरीअतों और धर्मों को मनसूख करने को असत्य (बातिल) कर देता है, इस आधार पर यह धार्मिक रूप से अस्वीकृत विचार है, और इस्लामी शरीअत के सभी प्रमाणों क़ुर्आन, सुन्नत और इज्माअ (मुसलमानों की सर्वसम्मति) के द्वारा निश्चित तौर पर हराम (निषिद्ध) है।

नवीं : पिछली बातों के आधार पर :

1- किसी मुसलमान के लिए जो अल्लाह पर रब होने के स्वरूप, इस्लाम पर धर्म के स्वरूप और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईश्दूत और पैगंबर के स्वरूप विश्वास रखता है, (उस के लिए) इस पापी विचारधारा की तरफ निमन्त्रण देना, इस पर प्रोत्साहित करना और इसे मुसलमानों के बीच प्रचलित करना जाइज़ नहीं है, उसे स्वीकार करना, उस के सम्मेलनों और गोष्ठियों में भाग लेना और उस की सभाओं से जुड़ना तो बड़ी दूर की बात है।

2- किसी मुसलमान के लिए तौरात और इंजील को अलग अलग छापना जाइज़ नहीं है, तो फिर एक ही कवर में क़ुरआन करीम के साथ छापने का क्या हुक्म होगा ? अत : जिस ने ऐसा किया या उस के लिए बुलावा दिया तो वह गुमराही में बहुत दूर पहुँच चुका है ; क्योंकि इस में हक़ (क़ुरआन करीम) और परिवर्तित या निरस्त हक़ (तौरात और इंजील) को एक साथ जमा करना पाया जाता है।

3- किसी मुसलमान के लिए एक ही परिसर में "मस्जिद, चर्च और मंदिर निर्माण" के निमन्त्रण को स्वीकार करना जाइज़ नहीं है ; क्योंकि इस में इस बात की स्वीकृति पाई जाती है कि इस्लाम धर्म के अलावा किसी अन्य धर्म के द्वारा अल्लाह की इबादत की जा सकती है, और सभी धर्मों पर उस की सर्वोप्परि का खण्डन पाया जाता है, तथा उस में इस बात का भौतिक निमन्त्रण पाया जाता है कि धर्म तीन हैं और धरती वालों के लिए उन में से किसी एक को मानने का अधिकार है, और यह कि वे सभी बराबर हैं, और इस्लाम अपने से पूर्व धर्मों को निरस्त करने वाला नहीं है। इस बात में कोई शक नहीं कि इस का इक़रार करना और आस्था रखना या उस पर सहमत या प्रसन्न होना कुफ्र और पथ भ्रष्टता है ; क्योंकि यह क़ुरआन करीम, पवित्र सुन्नत और मुसलमानों की सर्वसम्मत का खुला विरोध है, और इस बात की स्वीकृति है कि यहूदियों और ईसाईयों की तहरीफात (परिवर्तन और कमी बेशी) अल्लाह की तरफ से हैं, अल्लाह तआला इस से बहुत सर्वोच्च और पवित्र है। इसी तरह गिरजा घरों (चर्च) को "अल्लाह के घर"का नाम देना और उस में रहने वालों को यह समझना कि वे उन में अल्लाह की सहीह इबादत करते हैं जो अल्लाह के पास मक़बूल है, जाइज़ नहीं है, क्योंकि यह इस्लाम धर्म के अलावा पर इबादत है, और अल्लाह तआला का फरमान है कि :

"जो व्यक्ति इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्म ढूंढे उसका धर्म कदापि स्वीकार नहीं किया जायेगा और वह आख़िरत (प्रलय) में घाटा (हानि) उठाने वालों में से होगा।" (सूरत आल इम्रान : 85)

बल्कि ये ऐसे घर हैं जिन में अल्लाह के साथ कुफ्र किया जाता है, हम कुफ्र और उस के करने वालों से अल्लाह की पनाह में आते हैं। शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमिया रहिमहुल्लाह मजमूउल फतावा (22/162) में फरमाते हैं कि : "गिरजा घर और पूजा स्थल (आराधनालय) अल्लाह के घर नहीं हैं,अल्लाह के घर केवल मस्जिदें हैं, बल्कि ये तो ऐसे घर हैं जिन में अल्लाह के साथ कुफ्र किया जाता है, भले ही उस में कभी कभी अल्लाह का ज़िक्र भी किया जात है, अत : घर उस के निवासियों के स्तर और पद से जाना जाता है, और उस के निवासी काफिर लोग हैं, इसलिए यह काफिरों की इबादत के घर हैं।"

दसवीं : यह बात जान लेना अनिवार्य है कि : सामान्य रूप से काफिरों, और विशेष रूप से अहले किताब (यहूदियों और ईसाईयों) को इस्लाम की तरफ निमन्त्रण देना, क़ुरआन और हदीस के स्पष्ट प्रमाणों के द्वारा अनिवार्य है, लेकिन यह केवल वक्तव्य और अच्छे ढंग से बहस के द्वारा और इस्लामी शरीअत की किसी चीज़ से समझौता किये बिना ही होना चाहिए, और इस का मक़सद उन्हें इस्लाम से सन्तुष्ट करना और उस में प्रवेश कराना है, या उन पर हुज्जत स्थापित करना है ताकि जो तबाह हो वह समझ बूझ के साथ तबाह व बरबाद हो और जो जीवित रहे वह दलील के आधार पर ज़िन्दा रहे, अल्लाह तआला का फरमान है : "आप कह दीजिये कि ऐ किताब वाले (यहूदी और ईसाई) ऐसी इन्साफ वाली बात की ओर आओ जो हम में तुम में बराबर है कि हम अल्लाह तआला के सिवाय किसी की पूजा न करें न उस के साथ किसी को साझी बनायें, न अल्लाह तआला को छोड़ कर आपस में एक दूसरे को ही रब बनायें, फिर अगर वह मुंह फेर लें तो तुम कह दो कि गवाह रहो हम तो मुसलमान हैं।" (सूरत आल इमरान : 64)

लेकिन जहाँ तक उन की इच्छाओं पर उतरने और उन के उद्देश्यों को पूरा करने और इस्लाम की कड़ियों को तोड़ने और विश्वास के स्तंभों को ध्वस्त करने के लिए उन से बहस करने, उन के साथ मिल बैठने (भेंट करने) और उन से बात चीत करने का संबंध है तो यह बातिल है, अल्लाह, उस के पैगंबर और मोमिन लोग इस को नकारते और नापसन्द करते हैं, और जो कुछ बातें ये बनातें हैं उस पर अल्लाह तआला ही से मदद मांगते हैं। अल्लाह तआला का फरमान है : "और आप उन से होशियार रहिए कि कहीं ये लोग आप को अल्लाह के उतारे हुए किसी हुक्म से इधर उधर न कर दें।" (सूरतुल मायदा : 49)

समिति उपर्युक्त बातों को सुनिश्चित करते हुये और उसे लोगों के लिए स्पष्ट करते हुए ; मुसलमानों को सामान्य रूप से, और विद्वानों को विशेष रूप से अल्लाह तआला से डरने और उस के आत्म निग्रह, इस्लाम के समर्थन, और मुसलमानों के अक़ीदा को गुमराही और उस की ओर बुलाने वालों, कुफ्र और काफिरों से सुरक्षित रखने की वसीयत करती है, और उन्हें इस विचारधारा से सावधन करती है।